International Journal of Research in Hindi
www.hindijournal.in
ISSN: 2582-3493
Received: 27-02-2026, Accepted: 30-03-2026, Published: 14-04-2026
Volume 8, Issue 2, 2026, Page No. 18-21

क्षमा शर्मा की कहानियों में विधवा नारी विमर्श

सोनम बाजीराव आहेर[1], डॉ. जितेंद्र पितांबर पाटील[2]

[1] शोध छात्रा, संगमनेर नगरपालिका कला, दा. ज. मालपाणी वाणिज्य, ब. ना. सारडा विज्ञान कॉलेज, अहिल्यानगर, महाराष्ट्र, भारत

[2] शोध मार्गदर्शक, प्रोफ़ेसर, संगमनेर नगरपालिका कला, दा. ज. मालपाणी वाणिज्य, ब. ना. सारडा विज्ञान कॉलेज, अहिल्यानगर, महाराष्ट्र, भारत

सारांश

प्रस्तुत शोध–पत्र समकालीन हिंदी साहित्य की सशक्त हस्ताक्षर क्षमा शर्मा की कहानियों में व्याप्त 'विधवा नारी विमर्श' की सखोल जाँच करता है। पारंपरिक साहित्य में विधवा को दया और त्याग के रूप में ही दिखाया गया है। किंतु शर्मा जी ने उनके कथा–साहित्य में इस रूप से अलग विधवा नारी को सक्षम रूप में हमारे सामने प्रस्तुत करने का प्रयास किया है। आज विधवा नारी भी आर्थिक, राजनीतिक और मनोवैज्ञानिक संघर्षों का सामना कर एक सशक्त नारी के रूप में हमारे सामने प्रस्तुत है। यह शोध पत्र इस समाज में विधवा नारी की स्थिति और उसके अस्तित्व की लड़ाई का विश्लेषण भी करता है। समाज ने विधवाओं को अक्सर नीच दर्जा से ही देखा है। किसी भी उत्सव में अगर विधवा नारी आए तो वह अशुभ माना जाता था। उसे हमेशा ही तुच्छ भाव से देखा जाता था। शर्मा जी ने रचनाओं के माध्यम से इन्हीं रूढ़ि परंपराओं का पर्दाफाश किया है। यह शोध उनकी कहानियों में व्याप्त संवेदना, प्रतिरोध और नारी–अस्मिता के संघर्ष का विश्लेषण करता है।

मूल शब्दः विधवा विमर्श, क्षमा शर्मा, नारी संवेदना, पितृसत्तात्मक समाज, सामाजिक रूढ़ियाँ, अस्तित्व का संघर्ष, एकाकीपन, आर्थिक स्वावलंबन, यथार्थवाद।

हिंदी साहित्य में नारी विमर्श के अंतर्गत 'विधवा नारी विमर्श' एक भावुक एवं जटिल विषय रहा है। शर्मा जी के साहित्य में विधवा केवल एक अबला के रूप नहीं अपितु अपनी इच्छाओं और अधिकारों के प्रति सचेत नारी के रूप में उभारा है। वैसे देखा जाए तो हमारे वेदों में भी नारी को शक्ति माना गया है किंतु दुःख सिर्फ इतनी ही बात का है कि वही समाज पति की मृत्यु के बाद नारी को अशुभ और अबला के रूप में देखने लगता है। प्राचीन काल से लेकर आज तक विधवा नारी का संघर्ष चलता ही रहा है। जब कोई नारी विधवा होती उसी समय से उसे कई कुरीतियों का सामना करके अपने अस्तित्व के लिए अनवरत संघर्ष करना पड़ता है। सामाजिक बहिष्कार, रूढ़ियाँ, आर्थिक असुरक्षा, मानसिक और भावनात्मक पीड़ा जैसी कई समस्याओं से लड़ना पड़ता है। आज भी ऐसे कई क्षेत्र है जहाँ पर विधवाओं का आना मना है। अगर कहीं पर कोई मांगलिक कार्य चल रहा हो तो वहाँ पर विधवाओं को आने पर पाबंदी लगाई जाती है। तब उस एक नारी को विधवा होने का सबसे ज्यादा दर्द होता है। उसे अपने आभूषणों का त्याग करके अत्यंत सरल जीवन यापन करना पड़ता है। इस बात से यही पता चलता है कि विधवा नारियों को हमेशा ही धार्मिक और सांस्कृतिक आवरण में ढकने का प्रयास किया गया है। शर्मा जी ने उनके साहित्य के माध्यम से इसी आवरण को हटाकर नारी को एक सशक्त शक्ति रूप में नारी को हमारे सामने रखा है। एक विधवा किस प्रकार इन सारी समस्याओं का सामना करके किस प्रकार अपना 'स्व' अस्तित्व निर्माण करती है; इसका विस्तृत चित्रण उनकी कथा–साहित्य में है।

आज हम कितना भी कहे कि हम स्वतंत्र हुए है और स्वतंत्रता से जी रहे हैं लेकिन आज भी विधवा नारी खुलकर नहीं जी पाती क्योंकि यह कुप्रथाएँ, संघर्ष उनका पीछा कभी छोड़ते ही नहीं। इस बात का विस्तृत चित्रण हम क्षमा जी के कुछ कहानियों के उदाहरण देकर मुख्य रूप में देख सकते हैं।

शोध के उद्देश्य

प्रस्तुत शोध–लेख के मुख्य उद्देश्य निम्नलिखित हैं

1. पितृसत्तात्मक ढाँचे में विधवाओं के प्रति सामाजिक दृष्टिकोण का विश्लेषण करना।
2. परंपरागत रूढ़ियों के विरुद्ध विधवाओं के प्रतिरोध और सशक्तिकरण को रेखांकित करना।
3. क्षमा शर्मा जी की कहानियों में विधवा पात्रों की आर्थिक और मानसिक स्थिति का अध्ययन करना।
4. सामाजिक दृष्टिकोण का विश्लेषण करना।
5. आर्थिक स्वावलंबन का अध्ययन करना।
6. पितृसत्तात्मक ढाँचे की पड़ताल करना।
7. विधवा पुनर्विवाह और स्वतंत्र जीवन जीने के निर्णय पर लेखिका के दृष्टिकोण को समझना।

विधवा नारी

हमारे देश में पुरुष प्रधान संस्कृति होने के कारण हमारे देश में कई प्रकार की कुरीतियों, कुपरंपराओं का अभी भी प्रचलन चल रहा है। इसी में एक परंपरा है 'विधवा'। विधवा नारी होने के बाद उसे पर कई प्रकार की परंपराओं का और कुरीतियों का उस पर लादा जाता है। इनकी वजह से उस औरत को जीने के मुकाबले मृत्यु अच्छा लगने लगता है। क्षमा जी के कथा साहित्य में विधवा नारी संघर्ष के ऊपर भी कई कहानियां हैं उनमें 'छिनाल', 'न्यूड का बच्चा', 'थैंक्यू सद्दाम हुसैन', 'उत्तरार्ध', 'बुआ', 'जिन्न', 'पिता', 'न होने का एहसास' आदि कथाओं का समावेश है। इन कथाओं के माध्यम से क्षमा जी ने विधवा नारी की समस्याएं, उनके समग्र जीवन की कथा को हमारे सामने प्रस्तुत किया है।

डॉ. क्षमा शर्मा ने 'छिनाल' कथा से विधवा की कारुणिक स्थिति को उजागर किया गया है। विधवा नारी के जीवन चरित्रांकन के द्वारा पुरुषवादी समाज का घिनौना सत्य हमारे सामने रखने का प्रयास किया गया है। विधवा नारी की ओर देखने का नजरिया ही अलग होता है। उस नारी को जीवन जीना एक शाप जैसा लगता है। पुरुष प्रधान समाज ने विधवा नारियों से उनका जीवन जीने का हक ही छीन लिया है। डॉ. क्षमा शर्मा कहती है– "मेरे पैदा होने से बहुत पहले ही तो तुम इस दुनिया से विदा हो गई।

विदा हो क्या गई, कर दी गई। तुम एक लड़की, मर भी गई तो क्या ! लड़कियों के मौत पर दुख मनाना हंसने की बात है।"[1]

डॉ. क्षमा शर्मा की कथाओं में से नारी के प्रति समाज का निष्ठुर एवं असंवेदनशील आचरण को दिखाया गया है। विधवा नारी के प्रति नीतिमत्ता के पतन, वैषम्य, पक्षपातपूर्ण चिंतन यह सब बातें जी के कथाओं में से सिद्ध होता है।

'छिनाल' कथा की नायिका अत्यंत त्यागी, सहनशील और मेहनती है। उसके द्वार पर जो भी जाएगा वह कभी भूखा नहीं लौटेगा; इस तरह की त्यागी नारी इस कथा की नायिका है। मेहनत करने वाली विधवा नारी को हमारे शास्त्रों, रीति–रिवाजो, पुरातनकालीन परंपराओं पर खरी उतरने वाली देवी एवं तपस्वी होती है। पर इस कहानी के जरिए समाज की पुरुषप्रधान वृत्ति को व्यक्त किया है। डॉ. शर्मा जी ने स्त्री जीवन के जीवन में पुरुष की अहमियतता के पारंपरिक व्यक्ति को व्यक्त करते हुए लिखा है– "तुम विधवा थी न तुम्हारे लिए सब कुछ वर्जित था जिस परिवार की सेवा में तुम रात–दिन नौकरानियों की तरह खटती, वही परिवार जब किसी का ब्याह करता, बच्चे का जन्म, मुंडन और कर्णछेदन होता तो तुम्हें उनसे दूर रखा जाता था। शुभ कार्य में तुम्हारी छाया भी पड़ना पाप था।"[2]

इस प्रकार विधवा का पूर्ण जीवन तिरस्कार, उपेक्षा और निराशा से घिरा रहता था। इसकी परिकल्पना से ही विधवा नारी के जीवन की समस्याओं को हम समझ सकते हैं।

यह विधवा नारी अनेक लोगों की समाज सेवा करने में लगी हुई थी। महामारी में लोग जहां अपनों को ही मरने छोड़ देते हैं उसी जगह पर यह विधवा नारी सब की सेवा करती थी। सेवा करते समय इस विधवा औरत की भेंट नगर से आए हुए मास्टर से हो जाती है। "जिसकी बातों को तुम ध्यान से सुनती थी और सोचती थी कि मास्टर के रूप में एक देवता उसे गांव में अवतरित हुआ है, जिसे इतना कुछ आता है। ज्ञान का ठेका उन दिनों सिर्फ आदमियों के पास ही था। तुम्हारे जीवन में सिवा अंधकार और अभाव के क्या था ? उस अंधकार में वह तुम्हारे लिए किसी ज्योति की तरह आया। तुम और वह... वही हुआ३ तुम गर्भवती हो गई। गांव में मौजूद खोली आंखों को पता करते देर न लगी कि मामला क्या है... वह ही आंखें जो तुम्हारे सामने दर्द से छटपटा दी थीं... वे ही आंखें अचानक खूंखार हो गई... एक विधवा और गर्भवती।"[3]

इस प्रकार पुरुषवर्ग की विधवा नारी के प्रति भेदपूर्ण दृष्टि दिखाई देती है। जब वह विधवा नारी गर्भवती हो जाती है तब वह मास्टर उसे छोड़कर चला जाता है। बाद में वह पूरा गांव उसका बहिष्कार करता है। उसका खाना–पीना सब छीन लेता है; और भूख–प्यास की वजह से वह विधवा नारी अपना दम तोड़ देती है। अंत में उसका अंत्यविधी करने के लिए भी कोई नहीं गया। उसकी देह वैसे ही पड़ी रही, पर गांव में उसे हाथ लगाने वाला कोई भी नहीं था। पुरुषप्रधान समाज में नारी के प्रति ऐसी क्रुरता दिखाई देती है। ऐसे समाज में नारी के प्रति विद्रोही रूप ही होता है। घटना कोई भी हो लेकिन दोषी हमेशा नारी ही होती है। और पुरुष बेदाग रहता है। बिल्कुल सही सलामत उस पूरी घटना से बाहर भी निकल जाता है। समाज भी बिना सोचे नारी को ही दोषी ठहरता है, उसे ही कलंकित, कुल्टा कहकर उसके चरित्र की खाल उधेड़ देता है। समाज पुरुष को कभी भी दोषी नहीं ठहराता। इस कथा में इस विधवा नारी का मृत्यु हो जाता है उसके बाद भी उसे चरित्रहीन कहा जाता है और समाज उसे भुला देता है।

डॉ. क्षमा शर्मा समाज से सीधा प्रश्न करती है कि, "यदि गर्भ ठहरना एक स्त्री के लिए बुरा है तो उसे पुरुष के लिए भी तो उतना ही बुरा होना चाहिए ! मगर मास्टर साफ बच निकला। वह अपने कुल का कलंक नहीं कहलाया।"[4]

इस 'छिनाल' कहानी की नारी के प्रति समाज का भेदभावपूर्ण तथा एक तरफा पक्षपात पूर्ण आचरण सर्वत्र दिखता है, जिससे समाज में नारी की दयनीय, शोषित एवं कलुषित अवस्था का सहज ज्ञान होता है।

लेखिका क्षमा जी ने 'समाप्त पीढ़ी' में से एक और विधवा रूप को हमारे सामने रखा है। 'समाप्त पीढ़ी' की 'मां' जो नायिका की मां है; यह संघर्ष इस मां का है। यह मां पुरातन काल के नियमों की आज्ञाकारी थी। उसका यह मानना था कि विवाहोपरांत नारी की पहचान उसके पति द्वारा ही होती है। इसी कारण इस मां पर उनके पति ने कई प्रकार के अत्याचार किए। वह उसको पिटता है, गालियां देता है, अन्याय–अत्याचार करता है फिर भी वह पति की सेवा में दिन–रात जुटी रहती थी। क्योंकि उसे मालूम है कि पुरुषवादी समाज में विधवा का जीवन एक महाभयंकर अभिशाप है। इस कथा में मां का चरित्र– "कितना जीवट है मां में, यह तभी हम सब ने प्रत्यक्ष रूप से देखा था। वह दो महीने तक रात दिन लगातार जगकर, पिता की सेवा में लगी रही थी। मैं, भाभी–भाई सभी वहां थे, लेकिन मां ने कभी भी हम पर पिता की सेवा का भर नहीं डाला।... 'तेरी मां के साबुत कंधे तो तेरे पिता के साथ चले गए।' नाइन अपनी आंखें पोछने लगी थी जबकि मां घुटनों में मुंह छुपा कर देर तक रोती रही थी। मैंने मां को पहली बार इस तरह रोते देखा था। वह उन दिनों भी नहीं रोती थी जब दादी के कहने पर पिता जब–जब उसे पीठ देते थे, उसने महीनों बोलते नहीं थे। लेकिन उन सारी यंत्रनाओं के बीच भी मां की श्रीशोभा यानी उसका पति जीवित था जबकि आज उसकी निगाह में और सब कुछ तो है, वह श्री चली गई है।

इस प्रकार इस कथा के माध्यम से क्षमा जी ने हमारे सामने पुरुष प्रधान संस्कृति की मनोवृत्ति को रखा गया है। यह समाज विधवा को जी ने नहीं देता। स्त्री के प्रति समाज के इस विघातक मनोवृत्ति का डॉ. क्षमा शर्मा जी ने पर्दाफाश किया है।

क्षमा जी की और एक कहानी है 'जिन्न' इस कहानी की नायिका विधवा शिक्षिका होती है। शिक्षिका होने के बावजूद आज की राजकीय स्थिति और पुरुषों का नारियों के प्रति दृष्टिकोण को इस कथा के जरिए बताया गया है।

'जिन्न' कहानी की नायिका विधवा शिक्षिका होने के बावजूद उसे बदतमीजी की जाती है। इस कथा में जो निर्णय है वह कॉलेज हेड क्लर्क 'सहाय' होता है। सहाय कहता है– "नैयर बहन जी आपसे खुश नहीं है। चिंता न कीजिए, सब संभाल लूंगा। राज की बात है। वह अपनी भतीजी को लगाना चाहती थी। मैंने ही पक्ष लिया आपका। पर सबसे बनाकर रखनी पड़ती है। कभी–कभी रात को मिल लिया कीजिए उनसे।खाली होती है। मैं वहां होता ही हूं सब संभाल लूंगा।"[5]

जब सहाय चला जाता है तब सुधा के जान में जान आ जाती है। भाई की वजह से वह डगमगा रही थी। उसी दिन से उन सहाय सुधार आत्रे के पीछे पड़ जाता है। शीला से उसे पता चलता है कि इस कॉलेज में सब सहाय के नौकर है। प्रिंसिपल की नकल उसके हाथ में आ जाने के बाद वह देखी है की प्रिंसिपल के बेटे नील का एडमिशन भी इसी स्कूल से हुआ है। यह देखकर सुधा दुविधा में पड़ गई और आखिर अपनी अस्मिता की रक्षा हेतु उसने निर्णय लिया– "चली जाएंगी कल ही। बेआवाज! बेपरवाह! बिंदी लिपस्टिक को बिना बताए, सती–साधवी का प्रभाव लिए बिना रंगीन साड़ी पहनकर। पीपल का जिन्न फिर कभी उसके आंगन में नहीं उतरेगा।"[6] सुधा नौकरी छोड़कर खुद की रक्षा के लिए तत्पर हो जाती है। उसका कहना है कि विधवा और पुरुषवादी समाज की कैसी बात बन सकती है ? नारी जीवन संघर्ष करते हुए, नारी की अस्मिता को सुरक्षित रखना यह बहुत बड़ा सवाल उसके सामने है। वह कहती है कि चरित्र क्या सिर्फ पुरुषों का होता है ? नारी का कोई चरित्र नहीं होता क्या ? पुरातन काल से नारियों को पुरुषों की दासी बनाए रखा है। जन्म से ही उसके साथ अत्याचार होता है। जन्म से ही नहीं जन्मपूर्व से ही क्योंकि अगर नारी का गर्भ हो तो उसे निकाल दिया जाता है। भ्रूण–हत्या की जाती है। इस प्रकार नारी का जीवन अत्यंत ही संघर्षशील रहा है। हर बार

'नारी' को नई कहकर उसे नारी होने का एहसास दिलाते हैं और वह भी बनी बनाई परंपराओं को शिकार बन जाती है।
इस प्रकार समाज ने इस कथा के माध्यम से हमें बताया है कि नारी से 'स्व का अस्तित्व भी तैयार किया फिर भी पुरुषप्रधान संस्कृति कोई ना कोई बहाना ढूंढ कर उसका शोषण करता ही है।
क्षमा जी की एक और कहानी है 'न्यूड का बच्चा'। 'न्यूड का बच्चा' इस कहानी की नायिका वीनू भागकर प्रेम विवाह करती है। इसी वजह से माता–पिता और रिश्तेदारों से बहुत दूर जा चुकी थी। मगर एक दिन उसके पति की गड्ढे में गिरकर जान चली जाती है। तब उसके पास सिर्फ एक साल का उसका बच्चा था। उसकी जिम्मेदारी ही उसके लिए सब कुछ था। और उसकी परवरिश के लिए उसे वेश्या का काम करना पड़ा था। इस प्रकार एक विधवा नारी को अपने जिम्मेदारियां को पूरा करने के लिए उसे उसके शरीर का सहारा लेना पड़ा था ।
'उत्तरार्ध' कहानी की नायिका बहुत ही कम आयु में विधवा होती है। जब उसके पति का देहांत होता है तो उसे दो बच्चियों थी। उनका पालन पोषण उसने बहुत कठिनाई से किया था। देवेश का मृत्यु हो जाने के बाद देवेश की यादें उसे बहुत सताती थी। वह कहती थी, "तुम तो मुक्त हुए। मजे कर रहे हो ऊपर वाले के पास और मुझे न जाने क्या–क्या भुगतने के लिए यहां छोड़ गए।"[7]
एक विधवा नारी के लिए उसकी पति की कई चीजे बेहद अनमोल होती है; उनमें से एक चीज थी देवेश का टाइपराइटर। "एक दिन सफेदी वाले ने टाइपराइटर दूसरी तरफ रख दिया था। शाम को जब वह काम से लौटी तो उसके पैर सुन्न हो गई थे। पैरों में लकवा मार गया था जैसे। वह चीखना चाहती थी लेकिन सिर चकरा रहा था। किसी स्थान विशेष का क्या महत्व था उनके लिए, वह सफेदी वाले को कैसे बतातीं।"[8]
'उत्तरार्ध' कहानी की नायिका ने भी पुरुष प्रधान संस्कृति से लड़कर अपनी बच्चियों को पाला–पोसा, बड़ा किया, शिक्षा–दीक्षा ग्रहण करवाई और उनका भी घर बसा दिया। इस प्रकार अत्यंत संघर्ष करके उसने भी अपने स्व की रक्षा की थी।
क्षमा शर्मा जी की एक और कहानी 'थैंक्यू सद्दाम हुसैन'। इस कहानी की नायिका की मां उसके 24 साल की उम्र में ही विधवा हो गई थी। तब उसे एक बेटी थी पूर्णिमा उसे बेटी का पालन पोषण उसने काफी कठिनाइयों में सही मगर अच्छा किया। वह अच्छे काम पर भी लग गई। उसने एक दिन उसकी मां से पूछा कि "मां अपने तो दोबारा शादी क्यों नहीं कर ली ? तो वह हंसकर टाल गई थी, तुझे बड़ा करना था न।"[9]
इससे यह बात पता चलती है कि एक मां अपने बच्चों की खुशियों के लिए अपनी जान तक न्योछावर कर देती है। इस कहानी के मां का त्याग बहुत है, क्योंकि उन्होंने उनका समग्र जीवन इस बच्चे पर न्योछावर कर दिया था। इस पुरुष संस्कृति से लड़कर उस बच्ची को अच्छी परवरिश भी दी थी। इस प्रकार हम देख सकते हैं की क्षमा जी ने हर एक कहानी के माध्यम से विधवा नारी के कई समस्याओं को उजागर करके उनका संघर्ष हमारे सामने इन कथाओं के माध्यम से प्रस्तुत किया है।
'पिता' इस कहानी में नायिका के पिताजी का बहुत पहले देहांत हो चुका था। उसके बाद वह दिल्ली रहने लगी थी। लेकिन पिताजी की यादों से बहुत दूर नहीं जा पा रही थी। उन्हें चुप कराते हुए उनके भाई ने उन्हें चुप कराते हुए बोला था, "बाऊजी मरे नहीं, उनका रूप बदल गया, पहले वह एक थे लेकिन अब वह दुनिया की हर चीज में है।"[10]
पिताजी के गुजरने के बाद उनके मां और भाई ने उनकी परवरिश की। लेकिन उनकी मां को कई प्रकार से संघर्ष करना पड़ा था। उस कथा के जरिए इस नायिका की जो पड़ोसन थी 'मुन्नी बहन' वह बहुत कम आयु में विधवा हुई थी। हमारी पुरुषप्रधान समाज व्यवस्था ने नारियों को कई बंधनों से जकड के रखा गया था। "मुन्नी बहन जी, क्या रूप था उनका एकदम गोरा रंग बिना मेकअप और सफेद साड़ी में भी वह अनुपम सुंदरी दिखाई देती थी। पता चला था कि वाह विधवा है। उनके देवर और ननंद अक्सर उनके पास आया करते थे। मुन्नी बहन जी को शायद ही कभी किसी ने हंसते देखा था। हंसने की कोशिश भी करती तो मन में बैठा गहरा संस्कार उन्हें याद दिला देता– विधवाओं के लिए हंसना मना है ।[11]
'बुआ' इस कहानी की नायिका बाल विधवा थी। वह जब सात साल की थी तब उसकी शादी हो गई थी और जब वह नौ साल की थी तब वह विधवा हो गई थी। विधवा क्या होता है ? क्या यह बात नौ साल की बच्ची को समझती ? कुछ दिन वह ससुराल रही लेकिन कुछ दिनों बाद उसे वहां से निकाल दिया गया था।
हमारी पुरुषप्रधान समाज व्यवस्था में विधवा नारी को कहीं भी आना–जाना समाज को अच्छा नहीं लगता। जब इस विधवा नारी की उम्र खेलने– कूदने की, शादी–ब्याह, त्यौहार, यात्रा में जाने की होती है, तभी उसे सफेद साड़ी पहना दी जाती है। हमारे पुरुषप्रधान व्यवस्था की सोच कैसी होती है ? यह बात इस कथा से हमें जानने को मिलती है– "शादी–ब्याह, त्यौहार, उत्सव सब नौ साल की उम्र में उनकी दुनिया से विदा हो गये। जब उनकी उम्र की सब लड़कियां मेहंदी–महावार, स्वाती, सावन के झूले झूलती तब बुआ मार्रकीन की पुरानी सफेद साड़ी में लिप्त टुकुर–टुकुर उन्हें ताकती। इसके अलावा किसी भी शुभ काम को जाते वक्त किसी विधवा का सामने पड़ जाना सबसे बड़ा अपशकुन।" [12]
इस तरह की हमारी समाज व्यवस्था है। विधवा नारी को जीने का कोई अधिकार ही नहीं है; ऐसा समाज को लगता है। 'बुआ' यह कहानी विधवा नारी के संघर्ष की कहानी है। यह बुआ बचपन में ही विधवा हो जाती है। उसके बाद उसका पालन–पोषण उसका मौसेरा भाई करता है। उसे पढ़ाता है। वह नौकरी भी करने लगती है। लेकिन इस विधवा बाल्यावस्था में उसे बहुत कुछ सहना पड़ता है। इस प्रकार इस बुआ को नया जीवनदान इस भाई के वजह से मिलता है ।

निष्कर्ष

निष्कर्षतः हम यह कह सकते हैं कि शर्मा जी के कथा–साहित्य का सूक्ष्म अध्ययन यह स्पष्ट करता है कि उनका 'विधवा विमर्श' सहानुभूति पर नहीं, अपितु समानुभूति पर आधारित है। उनकी कहानियों की विधवा पात्र केवल कुरीतियों और पुरानी परम्पराओं को लेकर नहीं बैठीं अपितु वे समाज की उन दोहरी नीतियों को चुनौती देती हैं जहाँ पुरुष के विधुर होने पर समाज अलग नियम अपनाता है और नारी के विधवा होने पर अलग नियम अपनाता है। जब कोई पुरुष विधुर होता है तो उसकी दोबारा शादी करवा दी जाती है; पर नारी विधवा हो तो उसे संकुचित भाव से देखा और रखा जाता है।
लेखिका ने कथा–साहित्य में दिखाया है कि आज भी रीति–रिवाज, परम्परा मौजूद हैं किंतु आधुनिक विधवा नारी अब उन परम्पराओं को अपनी प्रगति की बाधा नहीं बनने देती। उनके कथा–साहित्य में विधवा जीवन का जीवंत यथार्थ चित्रण किया गया है। उनका साहित्य हमें यह सोचने पर मजबूर करता है कि क्या हम वास्तव में एक आधुनिक समाज बन पाए हैं? हम एक विधवा को पूर्ण मनुष्य के रूप में भी आज तक स्वीकार नहीं कर पाए। इसके बावजूद भी आज की विधवा हर एक संघर्ष का सामना करके अपने 'स्व' अस्तित्व और सम्मान दोनों को पाया है। उसने हमें यह दिखाया है कि विधवा दुखियारी या असहाय नारी नहीं होती; अपितु वह भी एक सक्षम और संघर्षशील नारी होती है। उनके कथा–साहित्य का अध्ययन करने पर हमें यह बात

स्पष्ट होती है कि विधवा नारी की स्थिति में समय के साथ काफी बदलाव आए हैं और आ भी रहे हैं लेकिन पुरुष प्रधान संस्कृति की मानसिकता आज भी पूरी तरह नहीं बदली है। वैश्वीकरण और बढ़ती जागरूकता ने उनके पुनर्विवाह और आत्मनिर्भरता के मार्ग प्रशस्त किए हैं। विधवा विमर्श का मुख्य उद्देश्य केवल उनके प्रति दया या करुणा का भाव जगाना नहीं, अपितु उन्हें समाज की मुख्यधारा में समान अवसर और सम्मान दिलाना है। जब तक समाज का दृष्टिकोण उनके प्रति नहीं बदलेगा, तब तक उनके संघर्षों का वास्तविक अंत संभव नहीं है।

संदर्भ सूची

1. इक्कीसवीं सदी का लड़का – क्षमा शर्मा, पृ. ७५
2. इक्कीसवीं सदी का लड़का – क्षमा शर्मा, पृ. ७६
3. इक्कीसवीं सदी का लड़का – क्षमा शर्मा, पृ. ७६
4. इक्कीसवीं सदी का लड़का – क्षमा शर्मा, पृ. २६
5. रास्ता छोड़ो डार्लिंग – क्षमा शर्मा – पृष्ठ – २७
6. रास्ता छोड़ो डार्लिंग – क्षमा शर्मा – पृ. २६
7. थैंक्यू सद्दाम हुसैन – क्षमा शर्मा, पृ. ४३
8. थैंक्यू सद्दाम हुसैन – क्षमा शर्मा, पृ. ५७
9. थैंक्यू सद्दाम हुसैन – क्षमा शर्मा, पृ. १२२
10. रास्ता छोड़ो डार्लिंग – क्षमा शर्मा, पृ. २४
11. रास्ता छोड़ो डार्लिंग – क्षमा शर्मा, पृ. २२
12. लड़की जो देखती पलटकर – क्षमा शर्मा, पृ. १५७